इकाई 5 संरक्षण का इतिहास

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 संरक्षण : परिभाषा

5.3 आधुनिक समय में संरक्षण का इतिहास

5.4 भारतीय दार्शनिक विचार

5.5 वर्तमान समय में संरक्षण का महत्व

5.6 सारांश

5.7 शब्दावली

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

पर्यावरण संबंधी पाठ्य-पुस्तकों पर प्रकृति के संरक्षण पर अपेक्षित बल नहीं दिया गया है और उनका अच्छी तरह उल्लेख भी नहीं हुआ है। इसलिए इस इकाई में हमारा उद्देश्य है :

- संरक्षण को परिभाषित करना,
- संरक्षण के इतिहास का संक्षिप्त पुनर्सृजन, और
- वर्तमान में संरक्षण के महत्व से आपको अवगत कराना।

5.1 प्रस्तावना

हाल के वर्षों में पर्यावरणीय समस्याओं की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ है और सरकार भी इसके प्रति जागरूक हुई है। परिणामस्वरूप लगभग हर देश में पर्यावरणीय विषय राजनैतिक कार्यक्रम का आवश्यक तथा महत्वपूर्ण हिस्सा बन गए हैं।

स्वाभाविक रूप से पृथ्वी का पर्यावरणीय भविष्य आम चिंता का विषय बनता जा रहा है। दुनिया भर में पर्यावरण की बिगड़ती स्थिति के प्रति बढ़ती हुई चिंता तो नई हो सकती है किन्तु पर्यावरण की देखरेख और संरक्षण का पुराना इतिहास रहा है। इस इकाई में हमने संरक्षण के प्रयासों के इतिहास का पता लगाने की कोशिश की है। हमें आशा है कि इससे संरक्षण की समस्या को सही संदर्भ में समझने में मदद मिलेगी। वस्तुत: इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य भी यही है। इस लंबे ऐतिहासिक परिदृश्य में मौजूदा पर्यावरण संबंधी चिंताओं को समझना आसान होगा।

5.2 संरक्षण : परिभाषा

प्रकृति के संरक्षण की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं है। वास्तव में प्रकृति के विषय में जैसे जैसे मानव की चिंता बढ़ी वैसे वैसे परिभाषाएँ भी विकसित हुईं। हमारे लिए और विशेष रूप से पर्यटन और पर्यावरण के मध्य उपस्थित विशिष्ट अंतर्संबंधों के दृष्टिकोण से संरक्षण का तात्पर्य जैव विविधता का इस हद तक संरक्षण है जो पारिस्थिकी और मानव जाति के अस्तित्व के लिए अनिवार्य है। एक सीमा तक यह भी स्वीकार कर लेना चाहिए कि प्रकृति में जीवों की कुछ जातियों का लुप्त होना और परिणामस्वरूप जैव विविधता की क्षति, समस्या का मुख्य केंद्र बिंदु नहीं है।

जैव विविधता संरक्षण की तुलना सम्पूर्ण जातियों की सुरक्षा से नहीं की जा सकती है और न ही पर्यावरण को पूर्व स्थिति में बनाए रखने का यह एक प्रयास भर है। यहाँ हमारी चिंता का मुख्य विषय तीव्र गति से हो रहा संसाधन दोहन और प्राकृतिक वास में होने वाला परिवर्तन है जो जैव विविधता के तेजी से लोप का कारण बन सकता है।

पर्यावरणवादी पर्यावरणीय व्यवस्थाओं और जातियों की विविधता को सुरक्षित रखना चाहते हैं। उन्हें विकास की प्रक्रिया से मोहभंग हुए लोगों का भी समर्थन प्राप्त होता है। जीवन के लिए अनिवार्य प्राकृतिक संसाधनों के नष्ट होते जाने से आशंकित हैं। ऐतिहासिक कारणों से औद्योगिक देशों में पर्यावरणीय संरक्षण के महत्व को उस प्रकार नहीं समझा गया जैसे विकासशील देशों के लोगों ने समझा है। अपने सांस्कृतिक इतिहास के कारण उत्तरी अमेरीकियों ने प्रकृति को दूषण से बचाने के लिए उसकी स्तुति की है और प्रकृति को वापस'' जैसा समाधान प्रस्तुत किया है। उपनिवेशी इतिहास के कारण तीसरी दुनिया के लोग पर्यावरणात्मक ह्रास के लिए सामाजिक और मानवीय कारणों और पक्षों के प्रति अधिक चिंतित और जागरूक रहे हैं। 1972 में स्टाक होम के संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सम्मेलन में (उत्तर विकसित देश के) पर्यावरणवादी दक्षिण (विकासशील देश) के अपनाए गए रूख से स्तब्ध रह गए। इस वैचारिक टकराव के बाद उत्तर और दक्षिण के पर्यावरणीय चिंतकों और वैज्ञानिकों ने पर्यावरण क्षेत्र में हुई कई परिचर्चाओं और परस्पर सहयोग द्वारा एक दूसरे से बहुत कुछ सीखा। पर्यावरण और विकास के विश्व आयोग की 1987 की रिपोर्टों में दोनों दृष्टिकोणें का उल्लेख हुआ है। विश्व के राजनैतिक नेताओं में भी नई चेतना जागृत हो रही है। जनसाधारण में भी उत्तर और दक्षिण के मतभेद कम होते जा रहे हैं। उत्तर के कार्यकर्ता अपने कार्यों से पर्यावरण के लिए उत्पन्न खतरों के बारे में राजनैतिक रूप से सक्रिय होते जा रहे हैं जबकि दक्षिण के लोग पारिस्थितिकी व्यवस्था के महत्व और आर्थिक विकास की अपनी समझ के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं। इसलिए उत्तर तथा दक्षिण के सांस्कृतिक अंतर के कारण अभी भी उनके द्वारा अपनाए गए पर्यावरणीय संरक्षण कार्य के प्रयासों में अंतर अब भी मौजूद है।

बोध प्रश्न 1

1) पर्यावरणीय संरक्षण से आप क्या समझते हैं ?

.....

.....

.....

.....

2) पर्यावरण संरक्षण के विषय उत्तर-दक्षिण के प्रमुख मतभेदों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

5.3 आधुनिक समय में संरक्षण का इतिहास

प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्रों और जीवों के आवास के संरक्षण का लंबा और पेचीदा इतिहास है। आधुनिक संरक्षण का रवैया और व्यवहार अधिकतर पश्चिमी से प्रभावित है। वह निश्चित रूप से उन राजनैतिक आर्थिक और बौद्धिक क्रांतियों के अनुरूप गढ़े गए हैं जिन्हें पश्चिमी समाज ने अनुभव किया था। यह शक्तियाँ विश्व भर में संरक्षण कार्य को आकार देने का निरंतर प्रयास कर रही हैं।

संरक्षण का यह पश्चिमी दृष्टिकोण मानव और प्रकृति के उस यहूदी-इसाई दर्शन के अनुसार है जो काफी पुराना है। यह दो विचारों पर आधारित है अर्थात :

- दोहन का अधिकार, और
- प्रबंध का दायित्व।

यह एक मौलिक यहूदी-इसाई विश्वास है कि प्रकृति का सृजन मानव जाति के उपकार के लिए हुआ है। अत: प्राकृति का दोहन एक वैध और स्वाभाविक व्यवसाय है। यह दृष्टिकोण पर्यावरण और उसके निवासियों की सुरक्षा की वह भावना नहीं देता जो शोषण को रोकती हो।

अठारहवीं शताब्दी के प्रारंभ तक प्रकृति के अधिकार और प्रतिफल अधिकतर सर्वोत्कृष्ट अभिजात वर्ग के हाथों में था। सत्रहवीं शताब्दी के अंत में हुई लोक-तांत्रिक क्रांति, जिसमें 1775-1783 को अमेरीकी क्रांति और 1789 की फ्रांसीसी क्रांति भी शामिल है, ने अधिकतर पश्चिमी समाज के ढांचे का पुनर्गठन किया। इस परिवर्तन के साथ जनसाधारण की उत्पादक संसाधनों तक पहुँच बढ़ गई और आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति सुधारने के लिए उनके उपयोग की योग्यता भी बढ़ गई। इस प्रकार समाज में आम लोगों को प्रकृति के दोहन का कानूनी अधिकार मिल गया।

लगभग उसी समय (मध्य 17वीं शताब्दी) औद्योगिक तथा वैज्ञानिक क्रांति प्रारंभ हुई औद्योगिक क्षेत्र में संसाधनों को नए पैमाने पर बढ़े हुए कौशल के साथ तैयार करने के लिए मशीनों और ऊर्जा के संसाधनों का उपयोग शुरू हुआ। भाप के इंजन के साथ रेल मार्ग और भाप से चलने वाले पानी के जहाजों का आगमन हुआ जिन्होंने दोहन के लिए नए क्षेत्र खोल दिए।

वैज्ञानिक क्षेत्र में हुए अविष्कारों ने प्रकृति संबंधी मौलिक धारणा में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया। ईश्वर की इस सृष्टि को रसायनशास्त्र और भौतिकी के प्रचलित नियमों द्वारा कार्यरत संसार से प्रतिस्थापित कर दिया गया। औद्योगिक और वैज्ञानिक क्रांतियों ने लोगों को संसाधनों के दोहन और भरपूर धन अर्जित करने की अधिक विस्तृत योग्यता और क्षमता प्रदान की। 19वीं शताब्दी के मध्य दशकों में जीव विज्ञान के प्राकृतिक विश्व के दृष्टिकोण में क्रांतिकारी परिवर्तन आ रहा था अर्थात जीवन की स्थाई सृष्टिवादी विचारधारा का एक विकासशील यंत्रवादी विचारधारा द्वारा प्रतिस्थापन हो रहा था। यह परिवर्तन चार्ल्स डार्विन और एल्फ्रेड वैलेस के **प्राकृतिकरण द्वारा विकास** के मत से बहुत अच्छी तरह प्रतिपादित होता है। प्राकृतिकरण द्वारा विकास की इस धारणा के कारण प्रारंभ की जीवित जातियों से सम्बद्ध सृष्टि की धारणा का स्थान प्रकृति में अन्योन्य किया की यंत्रवादी प्रक्रिया ने लिया। **विकासवादी विचारधारा ने यह सत्य व्यक्त करके सब की आँखें खोल दीं कि पर्यावरण में होनेवाले परिवर्तन, मानवों द्वारा किए गए परिवर्तनों सहित, कई प्रकार के जीवों के विलोपन का कारण बन सकते हैं जैसा कि जीवाश्मों के अभिलेखों से प्रमाणित होता है।**

द्वितीय विश्व युद्व ने अकस्मात संरक्षण की समस्याओं की ओर से ध्यान हटा दिया। इसके फलस्वरूप अद्वितीय आर्थिक विस्तारण और प्रौद्योगिक व जनसंख्या विस्फोटक के युग का आरंभ हुआ। प्रौद्योगिकी ने कृत्रिम रेशे, प्लास्टिक, अकार्बनिक कीटनाशक, सीसायुक्त इंधन और बहुत से ऐसे उत्पाद उपलब्ध कराए जिनके कारण कुछ समय बाद विर्षाक्त और जैविक रूप से सक्रिय पदार्थ पर्यावरण में समाविष्ट होने लगे। इस औद्योगिक प्रौद्योगिकी के विस्फोट में मानव जनसंख्या का कारक भी जुड़ गया। परिणामस्वरूप रसायन और रसायनिक अपशिष्टों के कारण वायु, जल और धरातल के प्रदूषण में खतरनाक रूप से वृद्धि हुई। शीघ्र ही प्रदूषकों की विषाक्तता के उन्मूलन की प्राकृतिक प्रक्रियाओं और उनके साथ चलने वाले स्थाई समंजन को प्रभावित करनेवाली प्रक्रियाओं को इन विशैले अपशिष्टों ने नष्ट करना शुरू किया। ये रसायनिक उत्पाद पारिस्थितिकी के प्रभाव को संकुचित करने लगे और लोगों को इसकी चिंता होने लगी। यह चिंता पर्यावरण की समस्या पर उपलब्ध विपुल साहित्य से प्रतिबिंबित होती है।

इस संदर्भ में निम्नलिखित पुस्तकों का उल्लेख किया जा सकता है। फ़ेयरफील्ड ऑसबर्न की **अवरप्लनडर्ड प्लैनेट,** और विलियम वॉयड की **रोड टू सरवाईवल,** दोनों 1948 में प्रकाशित हुईं। **प्रिंसटन अधिवेशन की रिर्पोट, मैन्स रोल इन चेनजिंग द फेस ऑफ द अर्थ** (1958), रेडिल कारसन की **साईलेन्ट स्प्रिंग** (1962), जीन डोर्स की **अव्वान्त क्यिू नेच्यूर म्योरे** (1965), पॉलएहरिच की **द पॉपूलेशन बॉम** (1968), डेनिस और डोनिला मीडोज़ की **द लिमिट्स ऑफ ग्रोथ** (1972), राबर्ट हेसब्रोनर की **ऐन इंक्वाएरी इंटू ह्यूमन प्रॉस्पेक्ट** (1974), संरक्षण के महत्व पर ये रचनाएँ विभिन्न क्षेत्रों जैसे विज्ञान, भूगोल, अर्थशास्त्र, राजनीति आदि के पुरुष तथा महिला विशेषज्ञों की हैं इसकी दृष्टि और शैली सही अर्थों में सार्वभौमिक है।

5.4 भारतीय दार्शनिक विचार

- हम पूरी दुनिया के पारिस्थितिकी संकट के विभिन्न पहलुओं – वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकी और भौगोलिक पर विचार करते रहे हैं। अब हम आपके सामने एक अन्य पक्ष प्रस्तुत करते हैं : दार्शनिक पक्ष जो कि भारतीय संस्कृति में समाविष्ट है। हालाँकि उपनिवेशी शासन में भारतीयों ने इसका परित्याग किया था फिर भी पारिस्थितिकी के भारतीय दर्शन को फिर से व्यवस्थित करने की आवश्यकता है। प्रकृति और पारिस्थितिकी का भारतीय सिद्धांत सृष्टि के सिद्धांत से बहुत अधिक प्रभावित है जिसकी मान्यता है कि विश्व के प्रत्येक तत्व, वस्तु और जीव की सृष्टि एक ही परमात्मा द्वारा हुई है; और मनुष्य का प्रकृति पर कोई विशेष अधिकार नहीं है। हिंदू धर्म ने प्रकृति के प्रति आदर भावना को अपने तीन मूल तत्वों में श्रद्धापूर्ण स्थान दिया है :
- ईश्वर में आस्था,
- पुरुष के विषय में अद्वैतवादी विचार,
- प्रकृति, और
- कर्तव्यों और उपासना के लिए नियमावली।

वेदों, पुराणों, उपनिषदों और अन्य धर्म ग्रंथों में वृक्षों, पौधों और वन्यप्राणियों का और सम्प्रदायों के लिए उनके महत्व का विस्तृत वर्णन मिलता है। भारतीय घरों में वृक्षों को विशेष स्थान प्राप्त है। मानव जीवन में वृक्षों और पौधों के महत्व का उदाहरण स्पष्ट रूप से **वरहा पुराण** में मिलता है जो स्वर्ग की प्राप्ति के लिए नियमित वृक्षारोपण की वकालत करता है। मत्स्य पुराण और पद्मपुराण में भी महान व क्षारोपण उत्सव-वृक्ष महोत्सव का वर्णन मिलता है। मत्स्यपुराण में एक वृक्ष रोपण को दस पुत्रों के संतान के बराबर माना गया है।

भारतवासी प्रकृति के दैनिक रूप में विश्वास रखते रहे हैं और इसी कारण विभिन्न वृक्षों और पौधों को धार्मिक अनुष्ठानों में उपयोग में लाया जाता रहा है। कुछ वृक्षों और पौधों को इतना पावन माना जाता है कि उनकी कल्पना यह है कि विभिन्न देवी और देवताओं ने उनमें अपना निवास स्थान बना लिया है। नरसिंह पुराण में वृक्ष की तुलना स्वयं भगवान (ब्रह्म) से की गई है। अथर्ववेद पीपल वृक्ष को कई देवताओं का आवास मानता है। विभिन्न वृक्षों और उनसे सम्बद्ध देवताओं और देवियों के नाम इस प्रकार हैं :

वृक्षों के नाम		सम्बद्ध देवता/देवी
1)	अशोक	बुद्ध, इंद्र, विष्णु अदितसा आदि
2)	पीपल	विष्णु, लक्ष्मी वनदुर्गा आदि
3)	तुलसी	राम, नारायण, विष्णु कृष्णा, जगन्नाथ, लक्ष्मी, आदि
4)	कदम्ब	कृष्ण
5)	बे	शिव, दुर्गा, सूर्य, लक्ष्मी
6)	वट	ब्रह्मा, विष्णु, शिव काल, कुबेरा कृष्णा, आदि

विभिन्न प्रकार के वृक्षों और पौधों की न केवल पूजा की जाती थी बल्कि हरे वृक्षों को काटना निषिद्ध किया गया है और इस नियम की अवहेलना करने वालों के लिए दण्ड भी निर्धारित किए गए हैं। भारतीय समाज इस सत्य से पूर्णत: अवगत था कि पौधों और वनों का अंधाधुंध विनाश बीमारियों और वायुमंडल के प्रदूषण का कारण बनेगा।

भारतवासियों के लिए प्रकृति और पशुओं से इनका संबंध प्रभुत्व और दमन का संबंध नहीं है बल्कि परस्पर आदर और दया का संबंध है। जैसा कि **यजुर्वेद** में सभी के लिए प्रार्थना की गई है। ऋषियों के आश्रमों में पशुओं और अन्य प्राणधारियों के शांतिमय-सहभाव की बहुत सी कथाएँ प्रचलित हैं। समस्त पशुओं में गऊ की पूजा हिंदू परिवार में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

प्राचीन और मध्यकाल में भारतीय संस्कृति ने पर्यावरण की सुरक्षा और संरक्षण के विषय में नैतिक निर्देशों की रूपरेखा प्रस्तुत की। ऋषि मुनियों ने जिन पर्यावरणीय नीतियों का प्रतिपादन किया था उनका अनुसरण न केवल साधारण व्यक्ति अपितु शासक वर्ग भी करता था। ये सिद्धांत भारतीय जीवन शैली के अनुरूप थे। यहां तक की छोटी से छोटी पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न करने वाले मामले का उचित हल निकाला जाता था।

भारतीय दर्शन और पर्यावरण के मध्य संबंधों पर इस खंड की इकाई 7 में और अधिक विचार किया गया है।

5.5 वर्तमान समय में संरक्षण का महत्व

विभिन्न विकासात्मक गतिविधियाँ तेजी से प्रकृति, उसके सुव्यवस्थित संतुलन और लाखों वर्षों से स्थापित अन्योन्याश्रय संबंधों नष्ट करती जा रही है। ऐसा करके समाज आत्म विनाश की ओर बढ़ रहा है। प्रकृति हनन ने पिछले दशकों में गति पकड़ ली है और हम सब तेजी से पारिस्थितिकीय विनाश और सम्पूर्ण सर्वनाश की ओर बढ़ रहे हैं। हम लोग तबाही के किनारे नहीं खड़े हैं बल्कि पूर्णरूप से उसके घेरे में आ चुके हैं। मनुष्य अपने विचारहीन कार्यों द्वारा तेजी से विश्व को कूड़े के ढेर में बदलता जा रहा है।

वर्तमान औद्योगीकरण तथा कृषि संबंधी कार्य अधिकतर गलत सोच का नतीजा है और यह अब भी जारी है। मनुष्य और समाज ने प्रकृति को निष्ठुरता से लूटा है और पृथ्वी को उजाड़ बना दिया है लेकिन मनुष्य और उसका समाज जो सबसे बुरा अपराध आज भी कर रहा है वह है पृथ्वी को दूर तक फैले हुए हरे भरे सघन वनों के आवरण से वंचित करना। ये ही वन मनुष्य और सारे जीवों का भरण पोषण करते हैं और उन्हें जीवन देनेवाला ऑक्सीजन प्रदान करते हैं। लगभग हर प्रांत और देश इस अपराधिक और मानव के विरुध कार्य में शामिल है। कुछ लोग तो लाभ कमाने के लिए ऐसा करते हैं और कुछ लोग जीवन की मूलभूत आवश्यकता की प्राप्ति के लिए प्राकृति को नष्ट कर रहे हैं। यही नहीं कुछ लोग मात्र मनोरंजन के लिए प्रकृति का विनाश करते हैं।

इस अपराध कार्य को तत्काल रोकना चाहिए। हमें पहले ही देर हो चुकी है। प्रकृति पहले से ही बोझ तले दबी है। अब मनुष्य के विकास के भारी बोझ को उठाना उसके लिए असंभव है। दानशील प्रकृति अब लगभग खाली हो चुकी। कम से कम अब तो जागना चाहिए।

बोध प्रश्न 2

1) प्रकृति संबंधी दो प्रमुख यूरोपीय अवधारणाएं बताइए ।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) पर्यावरण के विषय में तीन प्रमुख भारतीय दार्शनिक विचार स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) संरक्षण के महत्व को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5.6 सारांश

पारिस्थितिकीय स्थिति आज बहुत नाजुक हो चुकी है, इतनी नाजुक कि शीघ्र ही हमने कोई कदम नहीं उठाया तो स्थिति वश से बाहर हो जाएगी और यह क्षतिपूर्ति असंभव होगी। मनुष्य हर क्षेत्र में विशेषत: औद्योगिक और कृषी में दैनिक जीवन की गतिविधियाँ तीव्रता से प्रकृति को नष्ट कर रही हैं। मनुष्य पारिस्थितिकी का सर्वनाश करके आत्म विनाश की परिस्थितियां पैदा कर रहा है।

हमें क्या करना चाहिए ? नि:सन्देह पारिस्थितिकी की सुरक्षा और पुनर्जीवन का प्रश्न विश्व समाज के सामने सबसे ज्वलंत मुद्दा है। सभ्यता के सभी क्षेत्रों के भावी विकास संबंधी सारी योजनाओं में क्रांतिकारी परिवर्तन होना चाहिए अन्यथा हमारा जीवित रहना संभव नहीं होगा।

मनुष्य, समाज और उसकी संस्थाओं, जैसे सरकार, को चाहिए की वह वनों और प्रकृति के विनाश पर तत्काल रोक लगा दे और सामाजिक विकास को पूर्णरूप से प्रकृति के अनुकूल बना दे। मनुष्य को भविष्य में केवल संरक्षण की परिस्थितियों और पारिस्थितिकी के पुनर्जीवन पर ही जीवित रहना है। पर्यावरण के विनाश पर प्रतिबंध और उसकी पूर्ण सुरक्षा की जमानत को सामाजिक विकास का मूल आधार होना चाहिए। किसी बाह्य निकाय के बजाए "प्रकृति के अंग" के रूप में विकास के लिए मनुष्य को औद्योगिक, कृषी, सामाजिक-आर्थिक तथा राजनैतिक नीतियों में मौलिक परिवर्तन करना पड़ेगा। वास्तव में यदि हमें जीवित रहना है तो मनुष्य और सृष्टिकर्ता के संबंधों पर फिर से विचार करना होगा और उनके प्रति हमारी सोच, दृष्टिकोण और दर्शन को पूर्णरूप से बदलना होगा।

5.7 शब्दावली

उत्तर : विकसित देश

दक्षिण : विकासशील देश

भरण पोषण : बिना किसी दुष्प्रभाव के दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति

विकास : विज्ञान की सहायता से समाज की उन्नति की धारणा

जीवाश्म अभिलेख : पत्थर या मिट्टी पर आदिकाल के जीवों और उनकी हड्डियों, वनस्पतियों, उनकी पत्तियों आदि की छाप।

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) हमारी प्रकृति में विभिन्न प्रकार के प्राणी और वनस्पतियां हैं जो हमारी पारिस्थितिकी व्यवस्था के अंग हैं। ये सब और दूसरे कारक अन्योन्याश्रित हैं। इनमें से किसी एक की या सब की क्षतिं इस व्यवस्था के विनाश का कारण बन जाएगी। इनकी सुरक्षा पर ही मानव की उत्तरजीविता टिकी हुई है। अत: इन सबकी सुरक्षा अति आवश्यक है। प्रकृति की सही सुरक्षा पर्यावरणीय संरक्षण कहलाती है।

2) उत्तर दक्षिण के मध्य यह महत्वपूर्ण संवाद सामाजिक उत्पति और मानवीय कार्यों के कारण होने वाले पर्यावरणीय ह्रास की चिंता और "प्रकृति की ओर वापसी" जैसे समाधान से संबंधित है।

बोध प्रश्न 2

1) भाग 5.2 देखिए

2) भाग 5.3 देखिए

3) भाग 5.4 देखिए

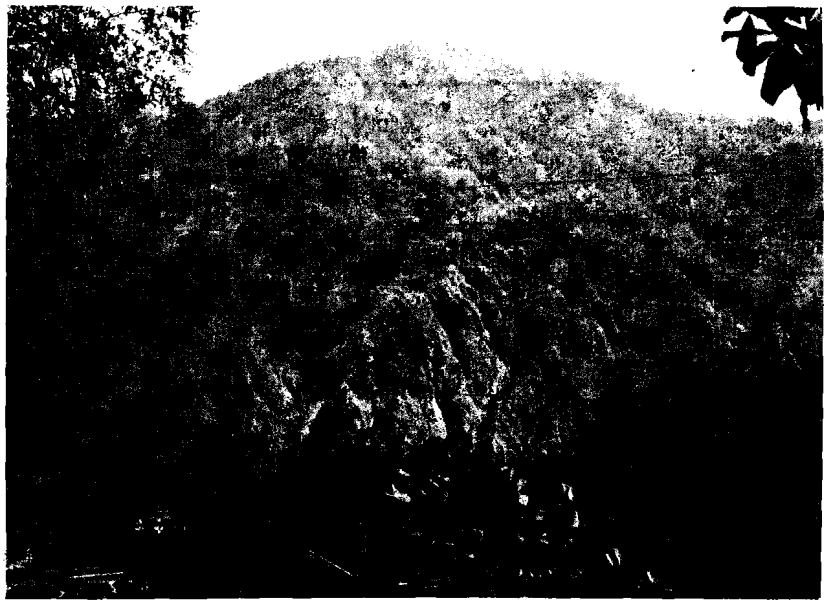

Whither Environment?